eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 3, Issue 01, Jan 2020

रवीन्द्र नाथ टैगोर के दर्शन में सार्वभौमवाद (Cosmopolitism)

[1] **डा0 जितेन्द्र यादव**

[1] असि0 प्रोफेसर दर्शन शास्त्र, महामाया राजकीय विद्यालय, महोना –लखनऊ।

Received: 12 Jan 2020, Accepted: 19 Jan 2020, Published on line: 30 Jan 2020

Abstract

रवीन्द्र नाथ टैगोर का दर्शन उपनिषदीय दर्शन से प्रभावित है और उस भारतीय आधुनिक परम्परा का वाहक है जिसे राजाराम मोहन राय ने प्रारंभ किया था। टैगोर के दर्शन में एक सार्वभौम दृष्टि है। 'मानव' का विश्लेषण वे (ससीम मानव तथा असीम मानव में करते हैं। 'ससीम मानव' परिस्थितियों (भौगोलिक जैविक, सामाजिक –धार्मिक , राजनैतिक) से बंधा है। असीम मानव सभी परिस्थितियों (जैविक, सामाजिक –धार्मिक , राजनैतिक) से ऊपर उठता है , मानव का यह रूप सार्वभौमिक रूप है।

'धर्म' का विश्लेषण करते हुये टैगोर धर्म को प्रचलित धर्म से अलग करते हैं और इसे मानव की आंतरिकता की अभिव्यक्ति कहते है। जो उसका संघटक घर्म है जो मानव मात्र का एक ही है और यह मानव धर्म है। इस शोध पत्र में विवरणात्मक विश्लेषण पद्धति का प्रयोग किया गया है।

संकेत शब्दः– सार्वभौमवाद, ससीम मानव असीम मानव, मानव धर्म, आधुनिकतावाद।

परिचय

प्रस्तुत शोध पत्र में रवीन्द्र नाथ टैगोर की दर्शन के' सार्वभौमवाद ' अवधारणा का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, इस विश्लेषण में हमने सार्वभौमवाद के स्रोत एवं तत्वों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। सार्वभौमवाद की अवधारणा आधुनिकता एवं पुर्नजागरण से संबंधित है, रवीन्द्र नाथ टैगोर के शास्त्रीय दार्शनिक होने पर कुछ विद्वान असहमत हो सकते हें लेकिन उनके आधुनिक होने पर संशय करना कठिन है। टैगोर भारतीय पुर्नजागरण एवं आधुनिकता को पूर्णतया अभिव्यक्त करते हैं।

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 3, Issue 01, Jan 2020

आधुनिकता (लैटिनModo) का शाब्दिक त्युत्पत्ति से अर्थ 'वर्तमान में होना' या प्रचलन में होना है। तात्कालीन युग पर विज्ञान, एवं बौद्धिकता का प्रभाव था, सभ्यता को विकास से ही परिभाषित किया जा रहा था ओर विकास का अर्थ विज्ञान एवं तकनीकी आधारित औद्यौगिक विकास था । टैगोर तत्कालीन राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय राजनीतिक , सामाजिक, धार्मिक साहित्यक गतिविधियों पर अपने विचारों को व्यक्त कर रहे थे, उनके विचार राष्ट्र की सीमाओं में नहीं बंधे थे। उन्होने सांस्कृतिक –धार्मिक जड़ता पर प्रहार किया। उन्होने विज्ञान को '' यूरोप को मानवता के लिए महानतम अवदान'' बताया , उनके अनुसार संस्कृति और विज्ञान का महान आलोक यूरोप में बुझ जाए तो पूर्व में हमारा क्षितिज भी अंधकार विलखता रहेगा''।(1) महत्वपूर्ण यह है कि विज्ञान को स्वीकार करने के पाश्चात्य भी स्थूल भौतिकवाद को नही स्वीकारते थे।

भारत में पुर्नजागरण का प्रारम्भ राजा राम मोहन राय से माना जाता है, पुर्नजागरण की विशेषता बुद्धि है। पुर्नजागरण आन्दोलन में प्राचीन भारतीय संस्कृति के गौरव की स्थापना की गई। दूसरे अर्थ में पुर्नजागरण का अर्थ नया आलोक भविष्य की ओर बढने की एक क्रान्ति कारी प्रेरणा ,घिसे हुऐ रीति रिवाजों की जंजीरों से मुक्ति। भारतीय चिन्तन में दोनो ही रूपों मे दार्शनिको ने पुर्नजागरण को व्यक्त किया है, पिछले डेढ़ सौ वर्षो मे भारतीय चिन्तक मूलतः भारतीय मनसा को दर्शन ,विज्ञान और संस्कृति की आधुनिक धाराओं के अनुरूप ढालने का प्रयास करते रहें हैं।

परम्परा (रूढ़ि के अर्थ में) जब भी भारतीय समाज में गहरे बैठ गई तो भारतीय चिन्तन परम्परा में उसका विरोध हुआ चार्वाक बौद्ध , महावीर , इसके उदाहरण हैं। दार्शनिक चिन्तन के स्तर पर भारतीय चिन्तन में रूढ़ियों का विरोध पूर्व मे भी हुआ है। रवीन्द्र नाथ टैगोर पर उपनिषदीय विचारों का गहरा प्रभाव है किन्तु वे अद्वैत विद्वान्त या विशिष्टाद्वैत की सिर्फ महिमा नही करते, वे इनमें आधुनिक समय के अनुसार परिर्वतन भी करते हैं। टैगोर पर बौद्ध धर्म का भी प्रभाव है तो बौद्ध दर्शन से मैत्री, करूणा, दया, विश्वप्रेम को ग्रहण करते है।(2)

टैगोर अपने को मूलतः कवि स्वीकारते हैं, वे कहते हैं कि ''मेरा धर्म मूलतः एक कवि का धर्म है, उनके लिये धर्म और दर्शन में कोई मूलभूत अन्तर न था उन पर वैष्णव कवियों के साथ जयदेव, विद्यापति, कबीर, तुकाराम, का प्रभाव था।(3)

टैगोर स्वीकारते है कि उन पर राजाराम मोहन राय द्वारा प्रवर्तित धार्मिक क्रान्ति जिसने ''अध्यात्मिक जीवन के मार्ग फिर से खोलने में सहायता दी '' का प्रभाव पड़।[4] वे राजाराम मोहन राव के महत्व को पहचानते हुए वे लिखते हैं कि '' एक दिन था जब कि राजाराम मोहन राय ने अकेले

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 3, Issue 01, Jan 2020

ही मानव जाति को सार्वभौमिकता का आदर्श सामने रखा और भारत को बाकी दुनिया से जोड़ने का प्रयास किया ''।[5] बकिंम चन्द की साहित्यक क्रान्ति के साथ ही सामाजिक ,आर्थिक क्रान्ति (जिसने भारतीय मानस को स्वाधीनता, सामाजिक कल्याण समानता , सामूहिक उद्योग और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग जैसे नये विचारों को प्रदान किया) का प्रभाव पड़ा।

रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा प्रतिपादित ''मानव'' की अवधारणा विलक्षण है क्योंकि वे ईश्वर को परमपूर्ण मानते हुये भी मानव को गरिमा एवं विशिष्ट स्;थान देते हैं। मानव की अवधारणा में दो पक्ष है':– ''ससीम मानव '' तथा ''असीम मानव''। प्रथम रूप में जैबिक मावन वैज्ञानिक है तथा द्वितीय अध्यात्मिक है। सृष्टि के विकास क्रम में यंत्रवत ढंग से जीवजातियां उत्पन्न एवं निरसन होती रहती थी, मानव के उद्भव के साथ विकास प्रक्रिया मे एक अर्थपूर्ण परिवर्तन आ गया । मानव में कुछ ऐसी शक्तियां थी कि वह अपनी क्रिया प्रतिक्रिया को नियंत्रित कर सकता था। टैगोर मानव के जैविक पक्ष की व्याख्या करते हैं लेकिन जैविक पक्ष को यंत्र नही मानते जैसा कि अन्य जीवों में है। मानव की प्रेरणा उसे अन्य जीवों से अलग करती है। पाश्चात्य विकास प्रक्रिया के यन्त्रवादी ढंग में मौलिक परिवर्तन आया , यह परिवर्तन बाह्यता से 'आन्तरिकता' की ओर तथा 'नियतत्वता' से 'स्वतंत्रता' की ओर है।

मानव के समीम पक्ष (भौतिक–मनोवैज्ञनिक–जैविक) के तीन पहलू हैं– प्रथम मनुष्य के गुण लक्षण अन्य जीवों के समान होते है अन्य जीवों के समान ये इन्द्रिय उद्दीपन, इन्द्रिय तृप्ति एवं शारीरिक सुख के लिए कार्य करता है। द्वितीय–इन्द्रिय मांग के अनुसार कार्य करता है करता है लेकिन उसका इन्द्रियों पर केन्द्रीय नियंत्रण बना रहता है। इस प्रकार वह अन्य जीवों से श्रेष्ठ बन जाता है। तृतीय–मनुष्य में परार्थ, जनहित की कामना रहती है।[6]

विकास क्रम में विकसित जीव जातियों की क्षमताएं नियत है केवल मानव में अतिरिक्त क्षमता या आधिक्य है, यह आधिक्य अपने से ऊपर उठने में है, वह अपनी सीमा से ऊपर उठ सकता है अन्य उसमें बंधे रहते हैं।[7] मानव प्रकृति पर निर्भर है किन्तु 'मानव' होने के कारण वह अपनी दुनिया रचकर उसे अपने अनुसार चला सकता भी सकता है।[8]

मानव स्वरुप पक्ष के असीम विषय में टैगोर कहते है कि इस पक्ष का पूर्ण तथा निश्चित विवरण देना सम्भव नहीं है, इसके विवरण देने के प्रयास में वे विभिन्न भावों और शब्दों का प्रयोग करते हैं। कभी वे इसे ''मनुष्य की सार्वभौमता का पक्ष'' , कभी'' मनुष्य मे आधिक्यता का अंश'' कभी इसे 'मनुष्य स्थित ईश्वरत्व' कहते हैं। जब मनुष्य श्रेष्ठ करना चाहता है परार्थ आत्मबलिदान को तत्पर होता तब

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 3, Issue 01, Jan 2020

वह इस असीम पक्ष की अनुभूति करता है।[9] 'अमरता की चाह', सर्जनात्मकता एवं रचनात्मकता इसी पक्ष के कारण होती है।

आत्म के ये दोनो पक्ष– एक चरम सत्ता से पृथकता का और दूसरा उसमें एकाकारता का है। व्यक्तिगत आत्म ''दोनों की ओर आकर्षित होकर कभी जगत् और कभी ईश्वर की ओर खिंचती रहती है।''[10] 'ससीम' छोर' अनिवार्यता की दुनिया में है और 'असीम छोर उसकी आकांक्षाओं की दुनिया में। '' आत्म अपने सिद्धांत में असीम किन्तु उसकी अभिव्यक्ति में ससीम है।''[11]

मनुष्य की असीमितता का पक्ष सार्वभौमिकता और विश्व बंधुत्व के लिए आधार बनाता है क्योंकि यह सीमित पक्ष (जैविक, भौतिक) से ऊपर उठता है ऊपर उठने के क्रम में ही बंधुत्व का आधार विकसित होता हैं। टैगोर कई विरोधों के समन्वय करने में 'प्रेम' की अवधारणा का भी प्रयोग करते हैं, यह 'प्रेम' 'सार्वभौम प्रेम' है, लौकिक जगत में विश्व बंधुत्व का रुप है। टैगोर मानव को इतना महत्व देते है कि वे कभी ईश्वर के लिए निरपेक्ष शब्द का प्रयोग नहीं करते हैं इसके विपरीत वे 'पुरुष' और 'मानव' जैसे शब्दों का प्रयोग करते है, इस पुरुष को सीमाबद्ध न समझा जाए इसलिए वे कुछ विशेषण– शाश्वत अमर, सम्पूर्ण, सार्वभौम, आदि, परम इत्यादि लगते हैं। सत्ता किसी सीमित पुरुष में नहीं बल्कि असीम पुरुष में है।[12] टैगोर द्वैत–अद्वैत, वैयक्तिक–निर्वैयक्तिक अवधारणा के बीच प्रेम के द्वारा समन्वय करनेका प्रयास करते हैं। मनुष्य में ईश्वर अपने–आपको विशेष रुप से प्रकट करता है।

मानव प्रकृति में सबसे शारीरिक और मानसिक शक्ति की दृष्टि (यूरोपीय मानवतावादी की भाँति) से श्रेष्ठ नहीं है बल्कि वह अपनी विशिष्ट स्वतंत्रता के कारण अन्य जीवों से श्रेष्ठ है।

प्रकृति में नियामक तत्व है नियतत्ववाद, मनुष्य में नियामक तत्व है स्वतन्त्रता। इससे उसे 'प्रकृति के बन्धनों का पार करने में' सहायता मिलती है।[13] स्वतन्त्रता से मनुष्य ग्रहणशील से सृजनशील बनता है वह नवीनता–प्रवर्तक कलाकार हो जाता है। वह कुतुहल करने का, ऐसी चीजों के विषय में अचरज करने का, जो भी है उससे संतुष्ट नहीं होता, वह और दूर और दुर्गम की लालसा करता है।[14]

टैगोर सत्ता, सत्य, ईश्वर को मानवता की दृष्टि परिभाषित करते हैं:–

वे कहते हैं– '' सत्ता मानवीय है।'' सत्ता को कुछ भी नाम दें यदि उसमें मानवता का तत्व नही है तो वह मनुष्य के भीतर सर्वोत्तम अंश को प्रेरित नही कर सकता।[15] धर्म के इतिहास में ईश्वर को

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 3, Issue 01, Jan 2020

सर्वोच्य स्थान उसके मानवीय स्वरूप के कारण मिला है– वह सम्पूर्णता के उन समस्त आदर्शो के लिए चिरन्तर पृष्ठभूमि प्रस्तुत करती है जिसका मनुष्य के स्वभाव से सामंजस्य है। इसे दूसरे ढंग से कह सकते हैं कि मनुष्य सत्ता में रहता है , उसकी सीमाओं को निर्धारित और व्यापक करता है, उसे रूप देता है। ''ईश्वरीय सत्य के सम्पूर्ण होने में मानवता आवश्यक तत्व है।''(16) ' मेरा धर्म मानव धर्म है जो असीम मानवता से परिभाषित होता है '' (17) यह धर्म कुछ मानवीय गुणों की ईश्वर में प्रतिष्ठा करने में नहीं बल्कि '' ईश्वर की मानवता की सिद्धि '' मे ंहै जो पहने से अनुमानित है। (18)

टैगोर के धर्म संबंधी विचारों पर राजाराम मोहन राय , उपनिषद एवं बौद्ध धर्म का प्रभाव था। राजाराम मोहन राय सर्व प्रथम सार्वभौमिक धर्म की बात सोचने वालों में थे उन्होने हिन्दू इस्लाम, बौद्ध ,ईसाई आदि धर्मो के बीच में दीवार हटाने की बात सोची इनके उभयनिष्ठ बिन्दु लेकर सार्वभौमिक धर्म पर विचार किया। (19) राजाराम मोहन राय के इन विचारों को पल्लवित किया टैगोर ने उन्होने धर्म एवं प्रचलित धर्म में भेद किया। :प्रचलित धर्म' का तात्पर्य धार्मिक सम्प्रदाय , धार्मिक संस्था आदि है। किसी विशेष व्यक्ति का जन्म किसी विशेष धर्म में होता है यह आकस्मिकता है । यह आकस्मिकता विशेष धर्म में जकड देती है, यह एक प्रकार का अंध विश्वास है जब धर्म इस प्रकार के सम्प्रदाय संस्थाओं में बंध जाता है , तब उसका स्वाभाविक प्रवाह अवरूद्ध हो जाता है। सच्चे धर्म में सहजता एवं उनमुक्तता प्रकट होती है , इसमें किसी प्रकार का बंधन नहीं है।(20)

टैगोर 'सच्चे धर्म' को स्पष्ट करते हुये कहते है कि एक अर्थ में हर वस्तु का हर चीज का अपना धर्म होता है जो उस वस्तु की अनिवार्य वास्तविकता को व्यक्त करती है , यही उसका धर्म है, वस्तु की आन्तरिक्ता है। (21) वस्तु के आन्तरिक स्वरूप की अभिव्यक्ति उस वस्तु का धर्म है, जैसे अग्नि का धर्म ' जलाना ''। प्रश्न है कि मानव का धर्म क्या है ? टैगोर के अनुसार मनुष्य की आंतरिक स्वरूप की अभिव्यक्ति मानव धर्म है। यह ' प्रचलित धर्म '' से भिन्न है।

मनुष्य का आन्तरिक स्वरूप क्या हे ? मानव का आन्तरिक स्वरूप है– भौतिक सीमाओं से सतत ऊपर उठना , अपानी स्वतंत्रता को प्राप्त करना। यह ऊपर उठने की प्रवृत्ति शाश्वत , आन्तरिक सर्जनात्मक शक्ति है इसी की अभिव्यक्ति धर्म है। ऊपर उठने के क्रम में मानव सभी द्वन्दो ,द्वैत से ऊपर उठ व्यापक प्रेम की अनुभूति – में सवों की अनिवार्य एकता को अनुभूत कर सकता है। धर्म की परिपूर्णता इसी प्रकार की सार्वभौम चेतना होगी। सच्चे धर्म के द्वार हर व्यक्ति के लिये खुला रहता है। धर्म को मूत रूप देने के प्रयास में उन्होने धर्म में प्रेम को केन्दीय स्थान दिया है। असीम की अनुभूति एकाएक नही होती धर्म मार्ग में सतत अग्रसर होना आवश्यक है, अग्रसर होने का अर्थ प्रेम

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 3, Issue 01, Jan 2020

की परिधि को विस्तृत करने जाना । मानव धर्म अपने स्व के बन्धन से ऊपर उठकर सब कुछ के साथ एकरूपता को अनुभूत करने का प्रयास है।

टैगोर के अनुसार धर्म का लक्ष्य वैयक्तिक आत्म तथा परम –आत्म के बीच एक्य की अनुभूति करना है, परमात्म अर्मूत भाव या नियम नहीं है।धर्म का अर्थ मानव में निहित ईश्वरत्व की अभिव्यक्ति है तथा धर्म का लक्ष्य उसी 'ईश्वरत्व' की स्पष्ट अनुभूति है । धार्मिक जीवन का अर्थ है प्रेम, बलिदान, निष्ठा , तथा निर्दोष आस्था का जीवन। धर्म का प्रारंभ प्रेम मे है उसकी परिणति भी प्रेम में है। धर्म प्रचलित धर्मो से अलग मानव धर्म है और सार्वभौम है।

टैगोर के दर्शन में सार्वभौमता की अवधारणा उनकी मानव की अवधारणा में निहित है , मानव की सीमित पक्ष जैबिक पक्ष को वे सार्वभौम नही बनाते हैं विज्ञान की दृष्टि से वह भी सार्वभौमिक पक्ष है। टैगोर असीमित पक्ष को सार्वभौम मानते हैं , क्योंकि वे मानव की स्वतंत्रता को मूल्यवान मानते हैं। मानव स्वनियमों से संचालित हो तो ही उसकी गरिमा है। स्वनियमों से संचालित मानवों मे विरोध नही हो सकता ।क्योंकि वे सतत अपने से ऊपर उठने को कटिवद्ध है। वे प्रेम बलिदान द्वारा विरोध को समाप्त कर सकते हैं इसी प्रकार वह अपने मानव धर्म को प्राप्त कर सकता है अपने वास्तविक स्वरूप को साकार कर सकता है। यह समाज सार्वभौमिक होगा और इसके निवासी विश्वबन्धुत्व की भावना से प्रवल होगें क्योंकि उन्होने आपस की एक्यता को अपने स्व त्याग से बलिदान से पाया है। यह ऐक्यता नीरस एकता नही है। इसमें बन्धुत्व है। जब मानव अपनी क्षुद्रता को त्याग कर ऊपर चढ़ेगा तभी वह सच्चे अर्थो में सार्वभौमिकता को महसूस कर सकता है।

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 3, Issue 01, Jan 2020

टिप्पणी / संदर्भ

(1) क्रियटिव यूनिटी, पृ0 –98

(2) Ibid पृ0–71

(3) राधा कृष्णन , फिलासफी ऑफ द उपनिषद में टैगोर द्वारा लिखित भूमिका ।

(4)कन्टेम्परारी इंडियन फिलास्फीः दि रिलीजन आफ एन अर्टिस्ट, (राधाकृष्णन और म्योर हेड द्वारा संम्पादित)

(5) रवीन्द्र नाथ टैगोर , भारत पाथिक, राजाराम मोहन राय ।

(6) इस विवरण पर हाब्स एवं लॉक द्वारा प्रतिपादित मनुष्य की अवधारणा का प्रभाव देख सकते हैं।

(7) रिलीजन ऑफ मैन , पृ0 –43

(8) Ibid पृ0–44

(9) पर्सनाल्टी, पृ0 –38

(10) बहुत सी कबिताओं में वे ईश्वर और जगत के बीच विभक्त होने की अवस्था से होने का दुःख का उल्लेख करते हैं।

(11) साधना , पृ0–81

(12) पर्सनाल्टी , पृ0 –58

(13) मैन, पृ0–4

(14) दि रिलीजन ऑफ मैन , पृ0–22

(15) Ibid पृ0–205

(16)क्रियटिव यूनिटी , पृ0 –80

(17) रिलीजन ऑफ मैन , पृ0 –96

(18) मैन, पृ0–26

(19) राजाराम मोहन राय , सार्वभौमिक धर्म संबंधी पुस्तिका , 1829 में प्रकाशित।

(20) क्रियटिव यूनिटी , पृ0 –16

(21) साधना , 74

(22) अरस्तु भी सद्गुण की चर्चा में बस्तु के मूल धर्म की बात करते हैं।